अध्याय - ३

श्री साईबाबा की स्वीकृति, आज्ञा और प्रतिज्ञा, भक्तों को कार्य समर्पण, बाबा की लीलाएँ ज्योतिस्तंभ स्वरूप, मातृप्रेम-रोहिला की कथा, उनके मधुर अमृतोपदेश।

श्री साईबाबा की स्वीकृति और वचन देना

जैसा कि गत अध्याय में वर्णन किया जा चुका है, बाबा ने सच्चरित्र लिखने की अनुमति देते हुए कहा कि सच्चरित्र लेखन के लिये मेरी पूर्ण अनुमति है। तुम अपना मन स्थिर कर, मेरे वचनों में श्रद्धा रखो और निर्भय होकर कर्त्तव्य पालन करते रहो। यदि मेरी लीलाएँ लिखी गई तो अविद्या का नाश होगा तथा ध्यान व भक्तिपूर्वक श्रवण करने से, दैहिक बुद्धि नष्ट होकर भक्ति और प्रेम की तीव्र लहर प्रवाहित होगी और जो इन लीलाओं की अधिक गहराई तक खोज करेगा, उसे ज्ञानरूपी अमूल्य रत्न की प्राप्ति हो जायेगी।

इन वचनों को सुनकर हेमाडपंत को अति हर्ष हुआ और वे निर्भय हो गये। उन्हें दृढ़ विश्वास हो गया कि अब कार्य अवश्य ही सफल होगा।

बाबा ने शामा की ओर दृष्टिपात कर कहा- ''जो, प्रेमपूर्वक मेरा नामस्मरण करेगा, मैं उसकी समस्त इच्छायें पूर्ण कर दूँगा। उसकी भक्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी। जो मेरे चरित्र और कृत्यों का श्रद्धापूर्वक गायन करेगा, उसकी मैं हर प्रकार से सदैव सहायता करूँगा। **जो भक्तगण हृदय और प्राणों से मुझे चाहते हैं, उन्हें मेरी कथाएँ श्रवण कर स्वभावतः प्रसन्नता होगी। विश्वास रखो कि जो कोई मेरी लीलाओं का कीर्त्तन करेगा, उसे परमानन्द और चिरसन्तोष की उपलब्धि हो जायेगी। यह मेरा वैशिष्ट्य है कि जो कोई अनन्य भाव से मेरी शरण आता है, जो श्रद्धापूर्वक**

मेरा पूजन, निरन्तर स्मरण और मेरा ही ध्यान किया करता है, उसको मैं मुक्ति प्रदान कर देता हूँ।''[१]

''जो नित्यप्रति मेरा नामस्मरण और पूजन कर मेरी कथाओं और लीलाओं का प्रेमपूर्वक मनन करते हैं, ऐसे भक्तों में सांसारिक वासनाएँ और अज्ञानरूपी प्रवृत्तियाँ कैसे ठहर सकती हैं? मैं उन्हें मृत्यु के मुख से बचा लेता हूँ।''

''मेरी कथाएँ श्रवण करने से मुक्ति हो जायेगी। अतः मेरी कथाओं को श्रद्धापूर्वक सुनो, मनन करो। सुख और सन्तोष-प्राप्ति का सरल मार्ग ही यही है। इससे श्रोताओं के चित्त को शांति प्राप्त होगी और जब ध्यान प्रगाढ़ और विश्वास दृढ़ हो जायगा, तब अखंड चैतन्यघन से अभिन्नता प्राप्त हो जायगी। केवल 'साई' 'साई' के उच्चारणमात्र से ही उनके समस्त पाप नष्ट हो जायेंगे।''

भिन्न भिन्न कार्यों की भक्तों को प्रेरणा

भगवान अपने किसी भक्त को मन्दिर, मठ, किसी को नदी के तीर पर घाट बनवाने, किसी को तीर्थपर्यटन करने और किसी को भगवत् कीर्त्तन करने एवं भिन्न-भिन्न कार्य करने की प्रेरणा देते हैं। परन्तु उन्होंने मुझे 'साई सच्चरित्र' -लेखन की प्रेरणा की। किसी भी विद्या का पूर्ण ज्ञान न होने के कारण मैं इस कार्य के लिये सर्वथा अयोग्य था। अतः मुझे इस दुष्कर कार्य का दुस्साहस क्यों करना चाहिये? श्री साई महाराज की यथार्थ जीवनी का वर्णन करने की सामर्थ्य किसे है? उनकी कृपा मात्र से ही कार्य सम्पूर्ण होना सम्भव है। इसलिये जब मैंने लेखन प्रारम्भ किया तो **बाबा ने मेरा अहं नष्ट कर दिया और उन्होंने स्वयं अपना चरित्र रचा। अतः इस चरित्र का श्रेय उन्हीं को है, मुझे नहीं।** जन्मतः ब्राह्मण होते हुए भी मैं दिव्य चक्षु-विहीन था, अतः 'साई सच्चरित्र' लिखने में सर्वथा अयोग्य था। परन्तु श्रीहरिकृपा से क्या सम्भव नहीं है? मूक भी वाचाल हो जाता है और पंगु भी गिरिवर चढ़ जाता है। अपनी इच्छानुसार कार्य पूर्ण करने की युक्ति वे ही जानें। हारमोनियम और बंसी को यह आभास कहाँ कि ध्वनि कैसे प्रसारित हो रही है? इसका ज्ञान तो वादक को ही है। चन्द्रकांतमणि की उत्पत्ति और ज्वार भाटे का रहस्य मणि अथवा उदधि नहीं, वरन् शशिकलाओं के घटने-बढ़ने में ही निहित है।

---

१. अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥ गीता ९॥ २२॥

बाबा का चरित्रः ज्योतिस्तम्भ स्वरूप

समुद्र में अनेक स्थानोंपर ज्योतिस्तम्भ इसलिये बनाये जाते हैं, जिससे नाविक चट्टानों और दुर्घटनाओं से बच जायें और जहाज को कोई हानि न पहुँचे। इस भवसागर में श्री साईबाबा का चरित्र ठीक उपर्युक्त भाँति ही उपयोगी है। वह अमृत से भी अति मधुर और सांसारिक पथ को सुगम बनाने वाला है। जब वह कानों के द्वारा हृदय में प्रवेश करता है, तब दैहिक बुद्धि नष्ट हो जाती है और हृदय में एकत्रित करने से, समस्त कुशंकाएँ अदृश्य हो जाती हैं। अहंकार का विनाश हो जाता है तथा बौद्धिक आवरण लुप्त होकर ज्ञान प्रगट हो जाता है। **बाबा की विशुद्ध कीर्त्ति का वर्णन निष्ठापूर्वक श्रवण करने से भक्तों के पाप नष्ट होंगे। अतः यह मोक्ष प्राप्ति का भी सरल साधन है।** सत्ययुग में शम तथा दम, त्रेता में त्याग, द्वापर में पूजन और कलियुग में भगवत्कीर्तन ही मोक्ष का साधन है। यह अन्तिम साधन, चारों वर्णों के लोगों को साध्य भी है। अन्य साधन, योग, त्याग, ध्यान-धारणा आदि आचरण करने में कठिन हैं, परन्तु चरित्र तथा हरिकीर्त्तन का श्रवण तो अत्यन्त ही सुलभ है। केवल उनपर ध्यान देने की ही आवश्यकता है। कथा-श्रवण और कीर्त्तन से इन्द्रियों की स्वाभाविक विषयासक्ति नष्ट हो जाती है और भक्त वासना-रहित होकर आत्म साक्षात्कार की ओर अग्रसर हो जाता है। इसी फल को प्रदान करने के हेतु उन्होंने सच्चरित्र का निर्माण कराया। भक्तगण अब सरलतापूर्वक चरित्र का अवलोकन करें और साथ ही उनके मनोहर स्वरूप का ध्यान कर, गुरु और भगवत्-भक्ति के अधिकारी बनें तथा निष्काम होकर आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त हों। 'साई सच्चरित्र' का सफलतापूर्वक सम्पूर्ण होना, यह साई-महिमा ही समझें, हमें तो केवल एक निमित्त मात्र ही बनाया गया है।

मातृप्रेम

गाय का अपने बछड़े पर प्रेम सर्वविदित ही है। उसके स्तन सदैव दुग्ध से पूर्ण रहते हैं और जब भूखा बछड़ा स्तन की ओर दौड़कर आता है तो दुग्ध की धारा स्वतः प्रवाहित होने लगती है। उसी प्रकार माता भी अपने बच्चे की आवश्यकता का पहले से ही ध्यान रखती है और ठीक समय पर स्तनपान कराती है। वह बालक का शृंगार उत्तम ढंग से करती है, परंतु बालक को इसका कोई भान ही नहीं होता। बालक के सुन्दर शृंगारादि को देखकर माता के हर्ष का पारावार नहीं रहता। माता का प्रेम विचित्र, असाधारण और निःस्वार्थ है, जिसकी कोई उपमा नहीं है। ठीक इसी प्रकार सद्गुरु का प्रेम अपने शिष्य पर होता है। ऐसा ही प्रेम बाबा का मुझ पर था और उदाहरणार्थ वह निम्न प्रकार थाः–

सन् १९१६ में मैंने नौकरी से अवकाश ग्रहण किया। जो पेन्शन मुझे मिलती थी, वह मेरे कुटुम्ब के निर्वाह के लिये अपर्याप्त थी। उसी वर्ष की गुरुपूर्णिमा के दिवस मैं अन्य भक्तों के साथ शिरडी गया। वहाँ अण्णा चिंचणीकर ने स्वतः ही मेरे लिये बाबा से इस प्रकार प्रार्थना की, "इनके ऊपर कृपा करो। जो पेन्शन इन्हें मिलती है, वह निर्वाह-योग्य नहीं है। कुटुम्ब में वृद्धि हो रही है। कृपया और कोई नौकरी दिला दीजिये, ताकि इनकी चिन्ता दूर हो और ये सुखपूर्वक रहें।" बाबा ने उत्तर दिया कि "इन्हें नौकरी मिल जायेगी, परन्तु अब इन्हें मेरी सेवा में ही आनन्द लेना चाहिए। इनकी इच्छाएँ सदैव पूर्ण होंगी, **इन्हें अपना ध्यान मेरी ओर आकर्षित कर, अधार्मिक तथा दुष्ट जनों की संगति से दूर रहना चाहिये।** इन्हें सबसे दया और नम्रता का बर्ताव और अंतःकरण से मेरी उपासना करनी चाहिये। यदि ये इस प्रकार आचरण कर सके तो नित्यानन्द के अधिकारी हो जायेंगे।"

रोहिला की कथा

यह कथा श्री साई बाबा के समस्त प्राणियों पर समान प्रेम की सूचक है। एक समय रोहिला जाति का एक मनुष्य शिरडी में आया। वह ऊँचा-पूरा, सुदृढ़ एवं सुगठित शरीर का था। बाबा के प्रेम से मुग्ध होकर वह शिरडी में ही रहने लगा। वह आठों प्रहर अपनी उच्च और कर्कश ध्वनि में कुरान शरीफ के कलमे पढ़ता और "अल्लाहो अकबर" के नारे लगाता था। शिरडी के अधिकांश लोग खेतों में दिन भर काम करने के पश्चात् जब रात्रि में घर लौटते तो रोहिला की कर्कश पुकारें उनका स्वागत करती थीं। इस कारण उन्हें रात्रि में विश्राम न मिलता था, जिससे वे अधिक कष्ट और असुविधा का अनुभव करने लगे। कई दिनों तक तो वे स्तब्ध रहे, परन्तु जब कष्ट असहनीय हो गया, तब उन्होंने बाबा के समीप जाकर रोहिला को मना कर इस उत्पात को रोकने की प्रार्थना की। बाबा ने उन लोगों की इस प्रार्थना पर ध्यान न दिया। इसके विपरीत गाँववालों को आड़े हाथों लेते हुये बोले कि वे अपने कार्य पर ही ध्यान दें और रोहिला की ओर ध्यान न दें। बाबा ने उनसे कहा कि रोहिला की पत्नी बुरे स्वभाव की है और वह रोहिला को तथा मुझे अधिक कष्ट पहुँचाती है, परन्तु वह उसके कलमों के समक्ष उपस्थित होने का साहस करने में असमर्थ है और इसी कारण वह शांति और सुख में है। यथार्थ में रोहिला की कोई पत्नी न थी। बाबा का संकेत केवल कुविचारों की ओर था। अन्य विषयों की अपेक्षा बाबा प्रार्थना और ईश-आराधना को महत्त्व देते थे। अतः उन्होंने रोहिला के पक्ष का समर्थन कर, ग्रामवासियों को शांतिपूर्वक थोड़े समय तक उत्पात सहन करने का परामर्श दिया।

बाबा के मधुर अमृतोपदेश

एक दिन दोपहर की आरती के पश्चात् भक्तगण अपने घरों को लौट रहे थे, तब बाबा ने निम्नलिखित अति सुन्दर उपदेश दियाः-

"तुम चाहे कहीं भी रहो, जो इच्छा हो, सो करो; परन्तु यह सदैव स्मरण रखो कि जो कुछ तुम करते हो, वह सब मुझे ज्ञात है। **मैं ही समस्त प्राणियों का प्रभु और घट-घट में व्याप्त हूँ। मेरे ही उदर में समस्त जड़ व चेतन प्राणी समाये हुए हैं।** मैं ही समस्त ब्रह्मांड का नियंत्रणकर्ता व संचालक हूँ। मैं ही उत्पत्ति, स्थिति व संहारकर्त्ता हूँ। मेरी भक्ति करने वालों को कोई हानि नहीं पहुँचा सकता। मेरे ध्यान की उपेक्षा करनेवाला, माया के पाश में फँस जाता है। समस्त जन्तु, चीटियाँ तथा दृश्यमान, परिवर्त्तमान और स्थायी विश्व मेरे ही स्वरूप हैं।"

इस सुन्दर तथा अमूल्य उपदेश को श्रवण कर मैंने तुरन्त यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब भविष्य में अपने गुरु के अतिरिक्त अन्य किसी मानव की सेवा न करूँगा। "तुझे नौकरी मिल जायेगी" - बाबा के इन वचनों का विचार मेरे मस्तिष्क में बारंबार चक्कर काटने लगा। मुझे विचार आने लगा, क्या सचमुच ऐसा घटित होगा? भविष्य की घटनाओं से स्पष्ट है कि बाबा के वचन सत्य निकले और मुझे अल्पकाल के लिये नौकरी मिल गई। इसके पश्चात् मैं स्वतंत्र होकर एकचित्त से जीवनपर्यन्त बाबा की ही सेवा करता रहा।

इस अध्याय को समाप्त करने से पूर्व मेरी पाठकों से विनम्र प्रार्थना है कि वे समस्त बाधाएँ- जैसे आलस्य, निद्रा, मन की चंचलता व इन्द्रिय-आसक्ति दूर कर और एकचित्त हो अपना ध्यान बाबा की लीलाओं की ओर दें और स्वाभाविक प्रेम निर्माण कर भक्ति-रहस्य को जानें तथा अन्य साधनाओं में व्यर्थ श्रमित न हों। **उन्हें केवल एक ही सुगम उपाय का पालन करना चाहिये और वह है श्रीसाईलीलाओं का श्रवण।** इससे उनका अज्ञान नष्ट होकर मोक्ष का द्वार खुल जायेगा। जिसप्रकार अनेक स्थानों में भ्रमण करता हुआ भी लोभी पुरुष अपने गड़े हुये धन के लिये सतत चिन्तित रहता है, उसी प्रकार श्री साई को अपने हृदय में धारण करो। अगले अध्याय में श्री साई बाबा के शिरडी आगमन का वर्णन होगा।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु॥

अध्याय - ४

श्री साई बाबा का शिरडी में प्रथम आगमन

सन्तों का अवतार कार्य, पवित्र तीर्थ शिरडी, श्री साई बाबा का व्यक्तित्व, गौली बुवा का अनुभव, श्री विट्ठल का प्रगट होना, क्षीरसागर की कथा, दासगणू का प्रयाग - स्नान, श्रीसाई बाबा का शिरडी में प्रथम आगमन, तीन वाड़े।

संतों का अवतार कार्य

भगवद्गीता (चौथा अध्याय ७-८) में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि "जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अवतार धारण करता हूँ। धर्म-स्थापन, दुष्टों का विनाश तथा साधुजनों के परित्राण के लिये मैं युग-युग में जन्म लेता हूँ।" साधु और संत भगवान के प्रतिनिधिस्वरूप हैं। वे उपयुक्त समय पर प्रगट होकर अपनी कार्यप्रणाली द्वारा अपना अवतार-कार्य पूर्ण करते हैं। अर्थात् जब ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य अपने कर्त्तव्यों से विमुख हो जाते हैं; जब शूद्र उच्च जातियों के अधिकार छीनने लगते हैं, जब धर्म के आचार्यों का अनादर तथा निंदा होने लगती है; जब धार्मिक उपदेशों की उपेक्षा होने लगती है; जब प्रत्येक व्यक्ति सोचने लगता है कि मुझसे श्रेष्ठ विद्वान् दूसरा नहीं है; जब लोग निषिद्ध भोज्य पदार्थों और मदिरा आदि का सेवन करने लगते हैं; जब धर्म की आड़ में निंदित कार्य होने लगते हैं; जब भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बी परस्पर लड़ने लगते हैं; जब ब्राह्मण संध्यादि कर्म छोड़ देते हैं; कर्मठ पुरुषों को धार्मिक कृत्यों में अरुचि उत्पन्न हो जाती है; जब योगी ध्यानादि कर्म करना छोड़ देते हैं और जब जनसाधारण की ऐसी धारणा हो जाती है कि केवल **धन, संतान और स्त्री ही सर्वस्व है तथा इस प्रकार जब लोग सत्य-मार्ग से विचलित होकर अधःपतन की ओर अग्रसर होने लगते हैं, तब संत प्रगट होकर अपने उपदेशों एवं आचरण**

के द्वारा धर्म की संस्थापना करते हैं। वे समुद्र के ज्योतिस्तम्भ की तरह हमारा उचित मार्गदर्शन करते तथा सत्य पथ पर चलने को प्रेरित करते हैं। इसी मार्ग पर अनेकों संत-निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, मुक्ताबाई, नामदेव, गोरा, गोणाई, एकनाथ, तुकाराम, नरहरि, नरसी भाई, सजन कसाई, सावंता माली और रामदास तथा कई अन्य संत सत्य-मार्ग का दिग्दर्शन कराने के हेतु भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रकट हुए और इन सबके पश्चात् शिरडी में श्री साई बाबा का अवतार हुआ।

पवित्र तीर्थ शिरडी

अहमदनगर जिले में गोदावरी नदी के तट बड़े ही भाग्यशाली हैं, जिन पर अनेक संतों ने जन्म धारण किया और अनेकों ने वहाँ आश्रय पाया। ऐसे संतों में श्री ज्ञानेश्वर महाराज प्रमुख थे। शिरडी, अहमदनगर जिले के कोपरगाँव तालुका में है। गोदावरी नदी पार करने के पश्चात् मार्ग सीधा शिरडी को जाता है। आठ मील चलने पर जब आप नीमगाँव पहुँचेंगे तो वहाँ से शिरडी दृष्टिगोचर होने लगती है। कृष्णानदी के तट पर अन्य तीर्थस्थान गाणगापूर, नरसिंहवाड़ी, और औदुम्बर के समान ही शिरडी भी प्रसिद्ध तीर्थ है। जिस प्रकार दामाजी ने मंगलवेढ़ा को (पंढरपुर के समीप), समर्थ रामदास ने सज्जनगढ़ को, दत्तावतार श्रीनरसिंह सरस्वती ने वाड़ी को पवित्र किया, उसी प्रकार श्री साईनाथ ने शिरडी में अवतीर्ण होकर उसे पावन बनाया।

श्री साईबाबा का व्यक्तित्व

श्री साईबाबा के सान्निध्य से शिरडी का महत्त्व विशेष बढ़ गया। अब हम उनके चरित्र का अवलोकन करेंगे। उन्होंने इस भवसागर पर विजय प्राप्त कर ली थी, जिसे पार करना महान् दुष्कर तथा कठिन है। शांति उनका आभूषण था तथा वे ज्ञान की साक्षात् प्रतिमा थे। वैष्णव भक्त सदैव वहाँ आश्रय पाते थे। दानवीरों में वे राजा कर्ण के समान दानी थे। वे समस्त सारों के साररूप थे। ऐहिक पदार्थों से उन्हें अरुचि थी। सदा आत्मस्वरूप में निमग्न रहना ही उनके जीवन का मुख्य ध्येय था। अनित्य वस्तुओं का आकर्षण उन्हें छू भी नहीं गया था। उनका हृदय शीशे के सदृश उज्ज्वल था। उनके श्री-मुख से सदैव अमृत वर्षा होती थी। अमीर और गरीब उनके लिये दोनों एक समान थे। मान-अपमान की उन्हें किंचित्मात्र भी चिंता न थी। वे निर्भय होकर सम्भाषण करते, भाँति-भाँति के लोगों से मिलजुलकर रहते, नर्तकियों का अभिनय तथा नृत्य देखते और गजल-कव्वालियाँ भी सुनते थे। इतना सब करते हुए भी उनकी समाधि किंचित्मात्र भी भंग न होती थी। अल्लाह का नाम सदा उनके ओठों पर था। जब

दुनिया जागती तो वे सोते और जब दुनिया सोती तो वे जागते थे।[१] उनका अन्तःकरण प्रशान्त महासागर की तरह शांत था। न उनके आश्रम का कोई निश्चय कर सकता था और न उनकी कार्यप्रणाली का अन्त पा सकता था। कहने के लिये तो वे एक स्थान पर निवास करते थे, परन्तु विश्व के समस्त व्यवहारों व व्यापारों का उन्हें भली-भाँति ज्ञान था। उनके दरबार का रंग ही निराला था। वे प्रतिदिन अनेक किंवदंतियाँ कहते थे, परन्तु उनकी अखंड शांति किंचित्मात्र भी विचलित न होती थी। वे सदा मसजिद की दीवार के सहारे बैठे रहते थे तथा प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल लेंडी और चावड़ी की ओर वायु-सेवन करने जाते तो भी सदा आत्मस्थित ही रहते थे। स्वतः सिद्ध होकर भी वे साधकों के समान आचरण करते थे। वे विनम्र, दयालु तथा अभिमानरहित थे। उन्होंने सबको सदा सुख पहुँचाया। ऐसे थे श्री साईबाबा, जिनके श्री-चरणों का स्पर्श कर शिरडी पावन बन गई। उसका महत्व असाधारण हो गया। जिस प्रकार ज्ञानेश्वर ने आलंदी और एकनाथ ने पैठण का उत्थान किया, वही गति श्री साईबाबा द्वारा शिरडी को प्राप्त हुई। शिरडी के फूल, पत्ते, कंकड़ और पत्थर भी धन्य हैं, जिन्हें श्री साई चरणाम्बुजों का चुम्बन तथा उनकी चरण-रज मस्तक पर धारण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भक्तगण को शिरडी एक दूसरा पंढरपुर, जगन्नाथपुरी, द्वारका, बनारस (काशी), महाकालेश्वर तथा गोकर्ण महाबलेश्वर बन गई। श्री साई का दर्शन करना ही भक्तों का वेदमंत्र था, जिसके परिणामस्वरूप आसक्ति घटती और आत्मदर्शन का पथ सुगम होता था। उनका श्रीदर्शन ही योग-साधन था और उनसे वार्तालाप करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते थे। उनका पादसेवन करना ही त्रिवेणी (प्रयाग) स्नान के समान था तथा चरणामृत पान करने मात्र से ही समस्त इच्छाओं की तृप्ति होती थी। उनकी आज्ञा हमारे लिये वेद सदृश थी। प्रसाद तथा उदी ग्रहण करने से चित्त की शुद्धि होती थी। वे ही हमारे राम और कृष्ण थे, जिन्होंने हमें मुक्ति प्रदान की; वे ही हमारे परब्रह्म थे। वे छन्दों से परे रहते तथा कभी निराश व हताश नहीं होते थे। वे सदा आत्म-स्थित, चैतन्यघन तथा आनन्द की मंगलमूर्ति थे। कहने को तो शिरडी उनका मुख्य केन्द्र था, परन्तु उनका कार्यक्षेत्र पंजाब, कलकत्ता, उत्तरी भारत, गुजरात, ढाका और कोकण तक विस्तृत था। श्री साई बाबा की कीर्त्ति दिन-प्रतिदिन चहुँ ओर फैलने लगी और जगह-जगहसे उनके दर्शनार्थ आकर भक्त लाभ उठाने लगे। केवल दर्शन से ही मनुष्यों, चाहे वे शुद्ध अथवा अशुद्ध हृदय के हों, के चित्त को परम शांति मिल जाती

---

१. सुखिया सब संसार है, खाये अरु सोये।
दुखिया दास कबीर है, जागे अरु रोये॥ - कबीर

थी। उन्हें उसी आनन्द का अनुभव होता था, जैसा कि पंढरपुर में श्री विट्ठल के दर्शन से होता है। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। देखिये, एक भक्त ने यही अनुभव पाया है: -

गौली बुवा

लगभग ९५ वर्ष के वयोवृद्ध भक्त, जिनका नाम गौली बुवा था, पंढरी के एक वारकरी थे। वे ८ मास पंढरपुर तथा ४ मास .(आषाढ़ से कार्तिक तक) गंगातट पर निवास करते थे। सामान ढोने के लिये वे एक गधे को अपने पास रखते और एक शिष्य भी सदैव उनके साथ रहता था। वे प्रतिवर्ष वारी लेकर पंढरपुर जाते और लौटते समय श्री बाबा के दर्शनार्थ शिरडी आते थे। बाबा पर उनका अगाध प्रेम था। वे बाबा की ओर एक टक निहारते और कह उठते थे कि ये तो श्री पंढरीनाथ, श्री विट्ठल के अवतार हैं, जो अनाथ-नाथ, दीन दयालु और दीनों के नाथ हैं। गौली बुवा श्री विठोबा के परम भक्त थे। उन्होंने अनेक बार पंढरी की यात्रा की तथा प्रत्यक्ष अनुभव किया कि श्री साई बाबा सचमुच में ही पंढरीनाथ हैं।

विट्ठल स्वयं प्रकट हुए

श्री साई बाबा की ईश्वर-चिंतन और भजन में विशेष अभिरुचि थी। वे सदैव "अल्लाह मालिक" पुकारते तथा भक्तों से कीर्त्तन-सप्ताह करवाते थे। इसे "नामसप्ताह" भी कहते हैं। एक बार उन्होंने दासगणू को कीर्त्तनसप्ताह करने की आज्ञा दी। दासगणूने बाबा से कहा कि "आपकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य है; परन्तु इस बात का आश्वासन मिलना चाहिये कि सप्ताह के अंत में विट्ठल भगवान् अवश्य प्रगट होंगे।" बाबा ने अपना हृदय स्पर्श करते हुए कहा कि विट्ठल अवश्य प्रगट होंगे। परन्तु साथ ही भक्तों में श्रद्धा व तीव्र उत्सुकता का होना भी अनिवार्य है। ठाकुर नाथ की डंकपुरी, विट्ठल की पंढरी, रणछोड़ की द्वारका यहीं तो है। किसी को दूर जाने की आवश्यकता नहीं है। क्या विट्ठल कहीं बाहर से आयेंगे? वे तो यहीं विराजमान हैं। **जब भक्तों में प्रेम और भक्ति का स्रोत प्रवाहित होगा तो विट्ठल स्वयं ही यहाँ प्रगट हो जायेंगे।**

सप्ताह समाप्त होने के बाद विट्ठल भगवान इस प्रकार प्रकट हुए। काकासाहेब दीक्षित सदैव की भाँति स्नान करने के पश्चात् जब ध्यान करने को बैठे तो उन्हें विट्ठल के दर्शन हुए। दोपहर के समय जब वे बाबा के दर्शनार्थ मसजिद पहुँचे तो बाबा ने

उनसे पूछा "क्यों विट्ठल पाटील आये थे न? क्या तुम्हें उनके दर्शन हुए? वे बहुत चंचल हैं। उनको दृढ़ता से पकड़ लो। यदि थोडी भी असावधानी की तो वे बचकर निकल जायेंगे।" यह प्रातःकाल की घटना थी और दोपहर के समय उन्हें पुनः दर्शन हुए। उसी दिन एक चित्र बेचने वाला विठोबा के २५-३० चित्र लेकर वहाँ बेचने को आया। यह चित्र ठीक वैसा ही था, जैसा कि काकासाहेब दीक्षित को ध्यान में दर्शन हुए थे। चित्र देखकर और बाबा के शब्दों का स्मरण कर काकासाहेब को बड़ा विस्मय और प्रसन्नता हुई। उन्होंने एक चित्र सहर्ष खरीद लिया और उसे अपने देवघर में प्रतिष्ठित कर दिया।

ठाणा के अवकाशप्राप्त मामलतदार श्री. बी.व्ही. देव ने अपने अनुसंधान के द्वारा यह प्रमाणित कर दिया है कि शिरडी पंढरपुर की परिधि में आती है। दक्षिण में पंढरपुर श्रीकृष्ण का प्रसिद्ध स्थान है, अतः शिरडी ही द्वारका है। (साई लीला पत्रिका भाग १२, अंक १,२,३ के अनुसार)

द्वारका की एक और व्याख्या सुनने में आई है, जो कि कै. नारायण अय्यर द्वारा लिखित "भारतवर्ष का स्थायी इतिहास" में स्कन्दपुराण (भाग २, पृष्ठ ९०) से उद्धृत की गई है। वह इस प्रकार है: -

"चतुर्वर्णामपि वर्गाणां यत्र द्वाराणि सर्वतः।
अतो द्वारावतीत्युक्ता विद्वद्भिस्तत्ववादिभिः॥"

जो स्थान चारों वर्णों के लोगों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिये सुलभ हो, दार्शनिक लोग उसे द्वारका के नाम से पुकारते हैं। शिरडी में बाबा की मसजिद केवल चारों वर्णों के लिये ही नहीं, अपितु दलित, अस्पृश्य और भागोजी सिंदिया जैसे कोढ़ी आदि सब के लिये खुली थी। अतः शिरडी को 'द्वारका' कहना ही सर्वथा उचित है।

भगवंतराव क्षीरसागर की कथा

श्री विट्ठलपूजन में बाबा को कितनी रुचि थी, यह भगवंतराव क्षीरसागर की कथा से स्पष्ट है। भगवंतराव के पिता विठोबा के परम भक्त थे, जो प्रतिवर्ष पंढरपुर को वारी लेकर जाते थे। उनके घर में एक विठोबा की मूर्त्ति थी, जिसकी वे नित्यप्रति पूजा करते थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र भगवंतराव ने वारी, पूजन श्राद्ध इत्यादि समस्त कर्म करना छोड़ दिया। जब भगवंतराव शिरडी आये तो बाबा उन्हें देखते ही कहने लगे कि "इनके पिता मेरे परम मित्र थे। इसी कारण मैंने इन्हें यहाँ बुलाया है। इन्होंने कभी

नैवेद्य अर्पण नहीं किया तथा मुझे और विठोबा को भूखों मारा है। इसलिये मैंने इन्हें यहाँ आने को प्रेरित किया है। अब मैं इन्हें हठपूर्वक पूजा में लगा दूँगा।"

दासगणू का प्रयागस्नान

गंगा और यमुना नदी के संगम पर प्रयाग एक प्रसिद्ध पवित्र तीर्थस्थान है। हिन्दुओं की ऐसी भावना है कि वहाँ स्नानादि करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण प्रत्येक पर्व पर सहस्त्रों भक्तगण वहाँ जाते हैं और स्नान का लाभ उठाते हैं। एक बार दासगणू ने भी वहाँ जाकर स्नान करने का निश्चय किया। इस विचार से वे बाबा से आज्ञा लेने उनके पास गये। बाबा ने कहा कि **"इतनी दूर व्यर्थ भटकने की क्या आवश्यकता है? अपना प्रयाग तो यहीं है।** मुझ पर विश्वास करो।" आश्चर्य। महान् आश्चर्य! जैसे ही दास गणू बाबा के चरणों पर नत हुए तो बाबा के श्री चरणों से गंगा-यमुना की धारा वेग से प्रवाहित होने लगी। यह चमत्कार देखकर दास गणू का प्रेम और भक्ति उमड़ पड़ी। आँखों से अश्रुओं की धारा बहने लगी। उन्हें कुछ अंतःस्फूर्ति हुई और उनके मुख से श्री साई बाबा की स्त्रोतस्विनी स्वतः प्रवाहित होने लगी।

श्री साई बाबा का शिरडी में प्रथम आगमन

श्री साई बाबा के माता पिता, उनके जन्म और जन्म-स्थान का किसी को भी ज्ञान नहीं है। इस सम्बन्ध में बहुत छानबीन की गई। बाबा से तथा अन्य लोगों से भी इस विषय में पूछताछ की गई, परन्तु कोई संतोषप्रद उत्तर अथवा सूत्र हाथ न लग सका। यथार्थ में हम लोग इस विषय में सर्वथा अनभिज्ञ हैं। नामदेव और कबीरदास जी का जन्म अन्य लोगों की भाँति नहीं हुआ था। वे बाल-रूप में प्रकृति की गोद में पाये गये थे। नामदेव भीमरथी नदी के तीर पर गोनाई को और कबीर भागीरथी नदी के तीर पर तमाल को पड़े हुए मिले थे और ऐसा ही श्री साई बाबा के सम्बन्ध में भी था। वे शिरडी में नीम-वृक्ष के तले सोलह वर्ष की तरुणावस्था में स्वयं भक्तों के कल्याणार्थ प्रकट हुए थे। उस समय भी वे पूर्ण ब्रह्मज्ञानी प्रतीत होते थे। स्वप्न में भी उनको किसी लौकिक पदार्थ की इच्छा नहीं थी। उन्होंने माया को ठुकरा दिया था और मुक्ति उनके चरणों में लोटती थी। शिरडी ग्राम की एक वृद्ध स्त्री नाना चोपदार की माँ ने उनका इस प्रकार वर्णन किया है - एक तरुण, स्वस्थ, फुर्तीला तथा अति रूपवान् बालक सर्वप्रथम नीम वृक्ष के नीचे समाधि में लीन दिखाई पड़ा। सर्दी व गर्मी की उन्हें किंचित्मात्र भी चिंता न थी। उन्हें इतनी अल्प आयु में इस प्रकार कठिन तपस्या करते देखकर लोगों को महान्

आश्चर्य हुआ। दिन में वे किसी से भेंट नहीं करते थे और रात्रि में निर्भय होकर एकांत में घूमते थे। लोग आश्चर्यचकित होकर पूछते फिरते थे कि इस युवक का कहाँ से आगमन हुआ है? उनकी बनावट तथा आकृति इतनी सुन्दर थी कि एक बार देखने मात्र से ही लोग आकर्षित हो जाते थे। वे सदा नीम वृक्ष के नीचे बैठे रहते थे और किसी के द्वार पर न जाते थे। यद्यपि वे देखने में युवक प्रतीत होते थे, परन्तु उनका आचरण महात्माओं के सदृश था। वे त्याग और वैराग्य की साक्षात् प्रतिमा थे। एक बार एक आश्चर्यजनक घटना हुई। एक भक्त को भगवान खंडोबा का संचार हुआ। लोगों ने शंका-निवारणार्थ उनसे प्रश्न किया कि "हे देव! कृपया बतलाइये कि ये किस भाग्यशाली पिता की संतान हैं और इनका कहाँ से आगमन हुआ है?" भगवान् खंडोबा ने एक कुदाली मँगवाई और एक निर्दिष्ट स्थान पर खोदने का संकेत किया। जब वह स्थान पूर्ण रूप से खोदा गया तो वहाँ एक पत्थर के नीचे ईंटें पाई गईं। पत्थर को हटाते ही एक द्वार दिखा, जहाँ चार दीप जल रहे थे। उन दरवाजों का मार्ग एक गुफा में जाता था, जहाँ गौमुखी आकार की इमारत, लकड़ी के तख्ते, मालायें आदि दिखाई पड़ीं। भगवान् खंडोबा कहने लगे कि इस युवक ने इस स्थान पर बारह वर्ष तपस्या की है। तब लोग युवक से प्रश्न करने लगे। परन्तु उसने यह कहकर बात टाल दी कि यह मेरे श्री गुरुदेव की पवित्र भूमि है तथा मेरा पूज्य स्थान है और लोगों से उस स्थान की भली भाँति रक्षा करने की प्रार्थना की। तब लोगों ने उस दरवाजे को पूर्ववत् बन्द कर दिया। जिस प्रकार अश्वत्थ तथा औदुम्बर वृक्ष पवित्र माने जाते हैं, उसी प्रकार बाबा ने भी इस नीम वृक्ष को उतना ही पवित्र माना और प्रेम किया। म्हालसापति तथा शिरडी के अन्य भक्त इस स्थान को बाबा के गुरु का समाधि-स्थान मानकर सदैव नमन किया करते थे।

तीन वाड़े

नीम वृक्ष के आसपास की भूमि श्री हरी विनायक साठे ने मोल ली और उस स्थान पर एक विशाल भवन का निर्माण किया, जिसका नाम साठे-वाड़ा रखा गया। बाहर से आने वाले यात्रियों के लिये वह वाड़ा ही एकमात्र विश्राम स्थान था, जहाँ सदैव भीड़ रहा करती थी। नीम वृक्ष के नीचे चारों ओर चबूतरा बाँधा गया। सीढ़ियों के नीचे दक्षिण की ओर एक छोटा सा मन्दिर है, जहाँ भक्त लोग चबूतरे के ऊपर उत्तराभिमुख होकर बैठते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जो भक्त गुरुवार तथा शुक्रवार की संध्या को वहाँ धूप, अगरबत्ती आदि सुगन्धित पदार्थ जलाते हैं, वे ईश-कृपा से सदैव सुखी होंगे। यह वाड़ा बहुत पुराना तथा जीर्ण-शीर्ण स्थिति में था तथा इसके जीर्णोद्धार की नितान्त आवश्यकता थी, जो संस्थान द्वारा पूर्ण कर दी गई। कुछ समय के पश्चात् एक

द्वितीय वाड़े का निर्माण हुआ, जिसका नाम दीक्षित-वाड़ा रखा गया। काकासाहेब दीक्षित, कानूनी सलाहकार (Solicitor) जब इंग्लैंड में थे, तब वहाँ उन्हें किसी दुर्घटना से पैर में चोट आ गई थी। उन्होंने अनेक उपचार किये, परन्तु पैर अच्छा न हो सका। नानासाहेब चाँदोरकर ने उन्हें बाबा की कृपा प्राप्त करने का परामर्श दिया। इसलिये उन्होंने सन् १९०९ में बाबा के दर्शन किये। उन्होंने बाबा से पैर के बदले अपने मन की पंगुता दूर करने की प्रार्थना की। बाबा के दर्शनों से उन्हें इतना सुख प्राप्त हुआ कि उन्होंने स्थायी रूप से शिरडी में रहना स्वीकार कर लिया और इसी कारण उन्होंने अपने तथा भक्तों के हेतु एक वाड़े का निर्माण कराया। इस भवन का शिलान्यास दिनांक ९-१२-१९१० को किया गया। उसी दिन अन्य दो विशेष घटनाएँ घटित हुईं – (१) श्री दादासाहेब खापर्डे को घर वापस लौटने की अनुमति प्राप्त हो गई और (२) चावड़ी में रात्रि को आरती आरम्भ हो गई। कुछ समय में वाड़ा सम्पूर्ण रूप से बन गया और रामनवमी (१९११) के शुभ अवसर पर उसका यथाविधि उद्घाटन कर दिया गया। इसके बाद एक और वाड़ा-मानो एक शाही भवन-नागपुर के प्रसिद्ध श्रीमंत बूटी ने बनवाया। इस भवन के निर्माण में बहुत धनराशि लगाई गई। उनकी समस्त निधि सार्थक हो गई, क्योंकि बाबा का शरीर अब वहीं विश्रान्ति पा रहा है और फिलहाल वह 'समाधि मंदिर' के नाम से विख्यात है। इस मंदिर के स्थान पर पहले एक बगीचा था, जिसमें बाबा स्वयं पौधों को सींचते और उनकी देखभाल किया करते थे। जहाँ पहले एक छोटी सी कुटी भी नहीं थी, वहाँ तीन-तीन वाड़ों का निर्माण हो गया। इन सब में साठे-वाड़ा पूर्वकाल में बहुत ही उपयोगी था।

बगीचे की कथा, वामन तात्या की सहायता से स्वयं बगीचे की देखभाल, शिरडी से श्रीसाई बाबा की अस्थायी अनुपस्थिति तथा चाँद पाटील की बारात में पुनः शिरडी में लौटना, देवीदास, जानकीदास और गंगागीर की संगति, मोहिद्दीन तम्बोली के साथ कुश्ती, मसजिद में निवास, श्री. डेंगले व अन्य भक्तों पर प्रेम तथा अन्य घटनाओं का अगले अध्याय में वर्णन किया गया है।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥